

कृत्रिम व अकृत्रिम चैत्यालयों के अर्घ (हिन्दी)

भूत भविष्यत् वर्तमान की तीस चौबीसी मैं ध्याऊँ ।
चैत्य चैत्यालय कृत्रिमाकृत्रिम, तीन लोक के मन लाऊँ ॥
ॐ ह्रीं त्रैलोक्य सम्बन्धी तीस चौबीसी, त्रिलोक सम्बन्धी कृत्रिमाकृत्रिम
चैत्याचैत्यालयेभ्य अर्घ्य नि.

वसुकोटि छप्पन लाख ऊपर, सहस सत्याणव मानिये ।
शतच्यार पै गिनले इक्यासी, भवन जिनवर जानिये ॥
तिहुँलोक भीतर सासते, सुर असुर नर पूजा करें ।
तिन भवन को हम अर्घ लेकै, पूजि है जग दुःख हरै ॥
ॐ ह्रीं त्रैलोक्य सम्बन्ध्यष्टकोटि-षट्पंचाशल्लक्ष-सप्तनवतिसहस्र चतु
शतैकाशीति अकृत्रिम-जिन चैत्यालयेभ्यो पूर्णार्घ्य नि. ॥४॥

चैत्य भक्ति आलोचना चाहूँ, कायोत्सर्ग अघ नासन हेत ।
कृत्रिमाकृत्रिम तीन लोक में, राजत हैं जिन बिंब अनेक ॥
चतुर्निकाय के देव जजै, ले अष्ट द्रव्य निज कुटुम्ब समेत ।
निज शक्ति अनुसार जजूँ मैं, कर समाधि पाऊँ शिवखेत ॥

पुष्पांजलि क्षेपण

पूर्व मध्य अपरान्ह की बेला, पूर्वाचार्यों के अनुसार ।
देव वन्दना करूँ भाव से, सकल कर्म की नासनहार ॥
पंच महा गुरु सुमिरन करके, कायोत्सर्ग करूँ सुखकार ।
सहज स्वभाव शुद्ध लख अपना, जाऊँगा मैं अब भव पार ॥
(कायोत्सर्ग पूर्वक नौ बार णमोकार मंत्र की जाप्य करें।)

दरबार तुम्हारा मनहर है, प्रभु दर्शन कर हर्षाये हैं ।
दरबार तुम्हारे आये हैं, दरबार तुम्हारे आये हैं ॥टेक॥
भक्ति करेंगे चित से तुम्हारी, तृप्त भी होगी चाह हमारी ।
भाव रहें नित उत्तम ऐसे, घट के पट में लाये हैं ॥दरबार. ॥१॥
जिसने चिंतन किया तुम्हारा, मिला उसे संतोष सहारा ।
शरणे जो भी आये हैं, निज आतम को लख पाये हैं ॥दरबार. ॥२॥
विनय यही है प्रभू हमारी, आतम की महके फुलवारी ।
अनुगामी हो तुम पद पावन, 'वृद्धि' चरण सिर नाये हैं ॥दरबार. ॥३॥

अकृत्रिम चैत्यालयों के अर्घ्य

(शार्दूलविक्रीडित)

कृत्रिमाकृत्रिम-चारु-चैत्य-निलयान् नित्यं त्रिलोकी-गतान्,
वंदे भावनव्यंतर-द्युतिवरान् स्वर्गामरावासगान् ।
सद्गंधाक्षत-पुष्प-दाम-चरुकैः सद्दीपधूपैः फलै-
र्द्रव्यैनीरमुखैर्यजामि सततं दुष्कर्मणां शांतये ॥१॥

ॐ ह्रीं कृत्रिमाकृत्रिम-चैत्यालयसंबन्धि-जिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

(उपजाति)

वर्षेषु-वर्षान्तर-पर्वतेषु नन्दीश्वरे यानि च मंदरेषु ।
यावन्ति चैत्यायतनानि लोके सर्वाणि वंदे जिनपुंगवानाम् ॥२॥

(मालिनी)

अवनि-तल-गतानां कृत्रिमाकृत्रिमाणां,
वन-भवन-गतानां दिव्य-वैमानिकानां ।
इह मनुज-कृतानां देवराजार्चितानां,
जिनवर-निलयानां भावतोऽहं स्मरामि ॥३॥

(शार्दूलविक्रीडित)

जंबू-धातकि-पुष्करार्ध-वसुधा-क्षेत्र त्रये ये भवा-
श्चन्द्रांभोज-शिखंडि-कण्ठ-कनक-प्रावृद्धनाभा जिनाः ।
सम्यग्ज्ञान-चरित्र-लक्षणधरा दग्धाष्ट-कर्मन्धनाः,
भूतानागत-वर्तमान-समये तेभ्यो जिनेभ्यो नमः ॥४॥

(स्रग्धरा)

श्रीमन्मेरौ कुलाद्रौ रजत-गिरिवरे शाल्मलौ जंबुवृक्षे,
वक्षारे चैत्यवृक्षे रतिकर-रुचिके कुंडले मानुषांके ।
इष्वाकारे जनाद्रौ दधि-मुख-शिखरे व्यन्तरे स्वर्गलोके,
ज्योतिर्लोकेऽभिवंदे भवन-महितले यानि चैत्यालयाणि ॥५॥

(शार्दूलविक्रीडित)

द्वौ कुंदेंदु-तुषार-हार-धवलौ द्वाविन्द्रनील-प्रभौ,
द्वौ बंधूक-सम-प्रभौ जिनवृषौ द्वौ च प्रियंगुप्रभौ ।
शेषाः षोडश जन्म-मृत्यु-रहिताः संतप्त-हेम-प्रभाः,
ते संज्ञान-दिवाकराः सुरनुताः सिद्धिं प्रयच्छन्तु नः ॥६॥

ॐ ह्रीं त्रिलोकसंबन्धि-कृत्रिमाकृत्रिम चैत्यालयेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।